संस्कृत साहित्य में नाट्यकला का विकास

अमरेश यादव

नाट्य का विकास नृत्त, नृत्य एवं संवाद के संयोग से हुआ है। इसके विकास का क्रम प्रागैतिहासिक काल से लेकर भरत के समय तक पूर्ण हो जाता है। सिंधु घाटी के प्राप्त अवशेषों से ज्ञात होता है कि उस समय नाट्य कला का पूर्ण विकास हो चुका था। मोहनजोदड़ों में नृत्य करते हुए कांस्य की मूर्ति प्राप्त होती है। इसमें दाहिना हाथ कमर तक और बाँया हाथ नीचे की ओर लटका हुआ है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मानो नर्तकी अभी थिरक देगी। इसी प्रकार अनेक मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं जिनसे नृत्यकला के तत्कालीन स्वरूप का परिचय मिलता है। नाट्यशास्त्र के रचनाकाल तक नृत्य व नाट्यकला का विकास एक व्यवस्थित अवस्था में प्राप्त होता है। नाट्यशास्त्र में दशरूपक रंगम×च पर अनेक प्रकारों से अभिनीत किये जाने लगे थे। आगे उनका विकास उन्तरोत्तर होता रहा और विश्वनाथ के समय तक दश रूपक व अट्ठारह उपरूपकों का विकास हो गया। नाट्यकला नृत्य के रूप में हमें प्राप्त हुई, और पुनः भाव प्रदर्शन की क्रिया मिलकर नृत्य से भाव प्रदर्शन किया जाने लगा। इस प्रकार नाट्य विकसित होकर रूपक, उपरूपक या नृत्यरूपक के रूप में रंगम०च में अभिनीत होता रहा है।